ISSN 319-7943 Impact Factor : 2.1632 (UIF) Volume - 4 | Issue - 11 | August - 2016

Tactful Management

ग़ज़ल गायकी में सौंदर्य अलंकरणों का प्रयोग

डॉ॰ नीलिमा सिंह

सहायक प्रोफेसर, संगीत विभाग, एस डी महविद्यालय, हांसी, हिसार(हरियाणा)

प्रस्तावना :

ग़ज़ल विधा को उप शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत रखा गया है परन्तु ग़ज़ल विद्या में शास्त्रीय संगीत में प्रमुख एवम् सूक्ष्म तत्त्व उसी प्रकार विद्यमान हैं जिस प्रकार शास्त्रीय संगीत की अन्य विधाओं में स्वीकार किए गए हैं। ग़ज़ल विधा की सांगीतिक रचना शास्त्रीय संगीत के आधार पर की जाती है जो कि किसी न किसी राग के अन्तर्गत होती है परम्परागत ग़ज़ल गायक अपनी ग़ज़लों की सांगीतिक बंदिश बनाते समय रागों की शुद्धता का ध्यान रखते थे उसी प्रकार वर्तमानकाल के ग़ज़ल गायक भी प्रस्तुति के समय राग के मौलिक स्वरूप को बनाए न रखकर इसे कुछ परिवर्तित रूप में प्रस्तुत करते हैं परन्तु फिर भी रागों का आधार वर्तमान ग़ज़ल गायकों की प्रस्तुति में भी विद्यमान रहता ही है। अत: शास्त्रीय संगीत ही संगीत की जड़ है और उसके अन्तर्गत आने वाली सभी शैलियां उसकी शाखाएं और फूल पत्तियां हैं। कोई भी ग़ज़ल गायक शास्त्रीय संगीत के आधार के बिना कोई भी रचना नहीं करता, ग़ज़ल की रचना किसी न किसी थाट के अन्तर्गत करते है, चाहे वो शुद्ध थाट में हो या मिश्रित रागों में 1 सप्तक के 12 स्वरों का प्रयोग जब करते हैं तो किसी न किसी थाट की उत्पत्ति तो होती ही है। इसीलिए शास्त्रीय संगीत के बिना संगीत रचना करना तो मेरे ख्याल से असम्भव ही है।

जब तक शास्त्रीय संगीत का आधार नहीं होगा तो ग़ज़ल गायकी में रस पैदा नहीं हो सकता। शास्त्रीय संगीत के अभ्यास से आवाज़ का नियन्त्रण, श्वास का नियन्त्रण स्वर और लय पर अच्छी पकड़ हो जाती है शास्त्रीय संगीत के अभ्यास के अभाव में गाने में परिपक्वता नहीं आती अत: ग़ज़ल गायक के लिए आवश्यक है कि पहले ग़ज़ल गायक शास्त्रीय संगीत का अच्छी तरह अध्ययन करे। जब तक ग़ज़ल में ठहराव नहीं होगा तब तक ग़ज़ल में रसात्मकता नहीं होगी और ठहराव केवल शास्त्रीय संगीत के द्वारा ही सम्भव है।

ग़ज़ल गायकी में प्रयुक्त शास्त्रीय सांगीतिक तत्वों का संक्षिप्त विवरण

ग़ज़ल की सांगीतिक रचना शास्त्रीय संगीत के आधार पर की जाती हैं इस संदर्भ में ग़ज़ल गायकी में प्रयुक्त शास्त्रीय संगीत के सौंदर्य अलंकरणों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है-

1.नाद

"गीतं नादात्मकं वाद्यं नादव्यकत्या प्रशस्यते।
तद्द्वयानुगतं नृतं नादाधीनमतस्त्रयम्।।2।।"[1]

अर्थात् गीत नादात्मक है। वाद्य नाद की अभिव्यक्ति करने के कारण प्रशंसित होता है। नृत उन दोनों का अनुगत है। अत: गीत, वाद्य और नृत्त नाद के अधीन है।

संगीत का आधार नाद है। संगीत की निर्मिति नाद से होती है नाद एक सार्वभौमिक ध्वनि है। आधुनिक ध्वनि विज्ञान में 'रव' (शोर) आदि के विपरीत संगीतोपयोगी ध्वनि के लिए नाद

[1] शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर, लेखिका एवम् अनुवादकर्त्री : सुभद्रा चौधरी, पृ. 20

शब्द का प्रयोग किया जाता है जो अंग्रेज़ी के श्उनेपबंस `वनदकश (संगीतोपयोगी ध्वनि) के अनुकरण पर सीमित अर्थ में प्रयुक्त होता है। ग्रन्थकार (शारंगदेव) ने नाद शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया है। नाद के विभिन्न स्वरूपों जैसे- 1. नाद की ऊंचाई-निचाई, 2. नाद का छोटा बड़ा पन, 3. नाद की जाति से स्वर रचना होती है और इन स्वर रचनाओं से ही संगीत निर्मित होती है। शास्त्रीय संगीत का आधार ग्रन्थ 'संगीत रत्नाकर' के रचयित पं. शरंगदेव के मतानुसार नाद से वर्ण, वर्ण से शब्द शब्द से वाक्य और वाक्यों इस जगत के व्यवहार व्यंजित होते है अतः संगीत जगत नाद के अधीन है।

नाद की ध्वनि तरंगों के विविध स्वरूपों से स्वर रचना होती है और उन स्वर रचनाओं से ही संगीत बनता है ऐसी स्थिति में प्रत्येक गायकी का मूल आधार नाद है "नाद के बिना गीत, वादन या नृत्य की सृष्टि संभव नहीं है। नाद ही मूल आधार है। यह जगत ही नादात्मक है।"[2] नाद की हृदयगाही प्रस्तुतियां ही सांगीतिक अभिव्यक्तियों में आकर्षण उत्पन्न करती है। नाद का हृदय रंजक स्वरूप जिस गायकी में प्रकट होता है वह गायकी अधिक प्रभावकारी, अनुरंजक और लोकप्रिय प्रमाणित होती हैं समस्त गायन शैलियों को नाद के उपर्यूक्त सांगीतिक महत्व को समझ रखते हुए विश्लेषण किया जाए तो नाद संदर्भित प्रभविष्णुता को आसानी से समझा जा सकता है।

इस संदर्भ में ग़ज़ल गायकी में संगीत के इस आधारभूत एवम् अति विशिष्ट तत्त्व 'नाद' का समावेश पूर्णतया विद्यमान है। "ग़ज़ल कंठ संगीत के अन्यान्य आनुषंगिक तत्त्वों के एकीकृत रूप में नाद के स्वरूप को प्रकट रूप में उभारने वाली सरलम सांगीतिक विधा है।[3] डॉ. प्रेम भंडारी का उपरोक्त कथन ग़ज़ल गायकी में नाद के स्वरूप को स्पष्ट परिलक्षित करता है।

ग़ज़ल गायकी में शब्द, स्वर, स्वरभेद, राग, स्थायी, अन्तरा, आलाप, तान, अलंकार, ताल, लय, सम इत्यादि संगीत के सभी तत्व विद्यमान रहते हैं और ये सभी सम्मिलित होकर अंततः नाद के विराट स्वरूप को अल्पकालीन समयावधि में प्रकट करते हैं। वस्तुतः सांगीतिक दृष्टि से ग़ज़ल अल्पावधि में संगीत के विराट स्वरूप नाद को मूर्त रूप में प्रकट करने का माध्यम है। अतः ग़ज़ल आंतरिक और व्याप्त रूप में संगीत के मूल तत्त्व नाद से अनुप्राणित है और नाद तत्त्व ग़ज़ल गायन के प्रत्येक स्वर में विद्यमान रहता है।

नाद की ऊंचाई - निचाई के अनुसार नाद के तीन भेद माने गए हैं जिन्हें मंद्र, मध्य और तार कहते हैं। कोई भी सांगीतिक अभिव्यक्ति तब तक पूर्ण नहीं बनती जब तक नाद के तीनों स्तरों का उसमें समावेश नहीं होता अर्थात् कोई भी सांगीतिक प्रस्तुति तब तक अपूर्ण ही रहती है और प्रभावशाली नहीं बन पाती जब तक कि मन्द्र, मध्य और तार सप्तक नाद के इन तीनों स्तरों की अपनी प्रस्तुति में आवश्यकतानुसार समाहित न कर ले। "जो नाद हृदयभूत है उसकी आत्मा है मंद्र, कंठ से उत्पन्न नाद का नाम है मध्य और मस्तिष्क सम्भूत जो नाद है उसकी संज्ञा है तार। मंद्र का द्विगुण है मध्य स्वम् मध्य का द्विगुण है तार।"

ग़ज़ल सांगीतिक अभिव्यक्ति की इस अनिवार्यता को भी अपनी प्रस्तुति में समाहित किए रहती है। ग़ज़ल में आवश्यकतानुसार तीनों सप्तकों की विशेषता विद्यमानरहती है। ग़ज़ल की प्रस्तुति में सामान्यतः प्रस्तुति का अधिकांश प्रस्तार मध्य सप्तक में होता है और भाव एवम् अनुभूति को अधिक गहराई एवम् तीव्रता प्रदान करने के लिए मंद्र सप्तक अथवा तार सप्तक के स्वर संयोजनों को उपयोग में लाया जाता है।

2.स्वर

सर्वप्रथम स्वर की परिभाषा शारंगदेव कृत्त संगीत रत्नाकर में इस प्रकार वर्णित है-

श्रुत्यनन्तरभावी यः स्निग्घोडनुरणनात्मकः।।24।।
स्वतो र०जयति श्रोतृचिंत स स्वर उच्यते।[4]

अर्थात् श्रुति के बाद अथवा बिना अन्तर के होने वाला जो स्निग्ध अनुरणनरूप अर्थात् जो बिना किसी सहायता के स्वयं अपने ही द्वारा श्रोता के चित्त को रंजित करता है अर्थात् उसे स्वरूप में रंग देता है वह 'स्वर' है।

स्वर मनुष्य के भावों, विचारों को प्रकट करने का सशक्त माध्यम है। उदाहरण के लिए एक शिशु जिसके पास कोई शब्द नहीं है फिर भी वह रो कर अपना दुख प्रकट कर देता है वही शिशु शब्दों के बिना सिर्फ़ हंस कर अपनी आवाज़ से सुख और खुशी प्रकट कर देता है। बच्चे के रोने और हंसने में कहीं भी शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है

[2] "ध्वनि - नाद - शब्द" संगीत रत्नाकार एक अध्ययन, लेखक : राजयेश्वर मिश्र, पृ. 23
[3] "हिन्दोस्तानी संगीत में ग़ज़ल गायकी', लेखिका : प्रेम भंडारी, पृ. 89
[4] शारंगदेव कृत संगीत रत्नाकर, व्याख्या एवम् अनुवादकर्त्री : सुभद्रा चौधरी, पृ. 72

परन्तु यह निश्चित है कि स्वरों का प्रयोग अवश्य हुआ है। इससे यह निष्कर्ष प्राप्त होता है कि शब्द से पहले व्यक्ति के भावों एवम् रसों को प्रकट करने का मूल माध्यम स्वर है। इस विचार की पुष्टि निम्नलिखित शेर के द्वारा भी होती है–

हमे कोई गम नहीं था ग़मे आशिकी से पहले।
न थी दुश्मनी किसी ने तेरी दोस्ती से पहले।।

गायक – मेंहदी हसन

उपरोक्त शेर के शाब्दिक अर्थ से यह ज्ञात होता है कि हमें प्यार के दुख से पहले कोई ग़म नहीं था और तेरी दोस्ती से पहले हमारा कोई दुश्मन नहीं था। साधारणतया शायर ने किन भावों को उपरोक्त शेर के माध्यम से प्रकट किया हैं इसका अंदाजा (अनुमान) नहीं लगाया जा सकता है। उपरोक्त शेर में भाव की रसानुभूति तभी होगी जब इसे स्वर का आधार प्राप्त होगा अत: स्वर में अभाव में उपरोक्त शेर का भाव दुख का भी हो सकता है, खुशी का भी हो सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि स्वर ही वह माध्यम है जो इस शेर में निहित भाव को या रस को शायर की भावना के अनुरूप एक निश्चित दिशा प्रदान कर सकते हैं।

इसी प्रकार एक अन्य शेर के द्वारा स्वर की महत्ता को समझा जा सकता है–

"दुनिया जिसे कहते हैं जादू का खिलौना है।
मिल जाए तो मिट्टि है खो जाए तो सोना है।।"

निदा फ़ाजली की लिखी ओर जगजीत – चित्रा की गायी ग़ज़ल के उपरोक्त शेर के प्रत्येक मिसरे में क्रियाओं सहित मात्र 26–26 वर्णों का प्रयोग हुआ है और इन वर्ण क्रियाओं से मिलकर बनने वाले सीमित शब्दों से शायर ने ज़िदगी की सच्चाई को इतने सही रूप में स्पष्ट किया है कि जिसे कई–कई पृष्ठों के तार्किक विवेचन के द्वारा भी समझाया नहीं जा सकता है। शेर के पहले मिसरे में दुनिया की हकीकत को 'जादू के खिलौने' मात्र दो शब्दों द्वारा स्पष्ट कर दिया गया है। इससे दुनिया की नश्वरता का विचार स्पष्ट समझ आता है। शेर के दूसरे मिसरे में 'मिट्टी और सोना' मात्र दो प्रतीकात्मक शब्दों से व्यक्ति के अन्दर की सच्चाई को स्पष्ट रूप से प्रकट किया गया है। सोना जिसके प्राप्त न होने की स्थिति में व्यक्ति व्याकुल रहता है प्राप्त होने की स्थिति में उसे सारहीन समझने और स्वीकारने लगता है। व्यक्ति के अन्दर की सच्चाई की वास्ताविकता को उपरोक्त शेर के माध्यम से प्रकट किया गया हैं एवम् जब शास्त्रीय संगीत के तत्त्व स्वरों के साथ जब यह शेर प्रस्तुत किया जाता है तो यह वास्तविकता जो काव्य में प्रस्तुत की गई है वह सौ गुणा अधिक प्रभावशाली होकर व्यक्ति के अन्दर छिपी सच्चाई को महसूस करने के लिए बाध्य कर देती है।

इस प्रकार स्पष्ट होता है कि ग़ज़ल गायकी वह काव्यात्मक, संगीतात्मक अभिव्यक्ति है जो सांगीतिक स्वरों के आसन पर बैठकर सीमित शब्दों द्वारा श्रोताओं को भावों और रसों में तृप्त कर देती है। अत: स्पष्ट है कि श्रोताओं ने उन ग़ज़लों के भावों और रसों को आसानी से समझ कर दिल की गहराइयों तक ग्रहण किया जिन ग़ज़लों को शास्त्रीय संगीत में स्वर का आधार मिला। यही कारण है कि बड़े–बड़े शायरों की भी सिर्फ़ वही ग़ज़लें जन मानस को अधिक गहराई तक छू सकी हैं जिन ग़ज़लो को गायकी ने स्वरों में बांधकर लोगों तक अपनी आवाज़ तथा गायकी के माध्यम से पहुंचाया है। यह सब स्वरों के संयोजन के बिना संभव नहीं है। अत: स्पष्ट है कि स्वरों के आरोह–अवरोह के संयोजन से ही ग़ज़ल विद्या में भावों एवम् रसों की अभिव्यक्ति संभव है, अन्यथा नहीं।

3. वर्ण

शास्त्रीय संगीत के तत्त्वों के अर्न्तगत वर्ण का भी महत्वपूर्ण स्थान है–

"गान क्रियोय्यते वर्ण: स चतुर्था निरूपित:
स्थाय्यारोहवरोही च संचारी व्यथ लक्षणम्"[5]

गाने की प्रत्यक्ष क्रिया या गाने के तरीके को वर्ण कहते हैं। अत: "वर्ण गाने की क्रिया से सम्बन्धित है"[6] वर्ण चार प्रकार के होते हैं– 1. स्थायी, 2. आरोही, 3. अवरोही, 4. संचारी वर्ण ।

[5] ध्वनि–नाद– शब्द, संगीत रत्नाकर एक अध्ययन, लेखक : राज्येश्वर मिश्र, पृ. 24
[6] संगीत निबंध, राग–रचना के सिद्धांत और उनकी मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, लेखक : लक्ष्मीनारायण गर्ग, पृ. 292

किसी भी एक स्वर को बार-बार गाने बजाने को स्थाई वर्ण कहते हैं।

सांगीतिक प्रस्तुति के अन्तर्गत नीचे के स्वर से ऊपर के स्वरों की ओर क्रमानुसार बढ़ने की क्रिया को आरोही वर्ण कहते हैं। जैसे- षड़ज से निषाद की ओर स्वरों को गाते हुए जाना आरोही वर्ण कहलाता है।

इसके विपरीत ऊपर के स्वरों से नीचे के स्वरों की तरफ आने की प्रक्रिया को अवरोही वर्ण कहते हैं। निषाद से षड़ज की ओर स्वरों को गाते हुए आना।

स्थायी, आरोही, अवरोही इन तीनों वर्णों की सम्मिलित प्रक्रिया को संचारी वर्ण कहा जाता है। गज़ल गायकी के अर्न्तगत वर्ण के प्रयोग की इन चारों प्रक्रियाओं का प्रयोग विद्यमान रहता है।

उदाहरण के लिए गुलाम अली की गज़ल "अपनी धुन में रहता हूं मैं" मैं भी तेरे जैसा हूं को गुलाम अली ने कई प्रकार से गाया है। कभी ठहराव के साथ कभी तेज़ी के साथ कभी आरोहात्मक तो कभी अवरोहात्मकता के साथ विशेषकर इस गज़ल के एक शेर की अरकान "जाति रूत का झौंका हूं" में झौंका शब्द में आरोह अवरोह दोनों का प्रयोग किया है।

अत: स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि गज़ल गायकी में वर्ण, तत्व विद्यमान है।

4.राग

हिन्दोस्तानी संगीत का एक अनिवार्य तत्व राग है। मतंग के मतानुसार "विशिष्ट स्वर वर्णों से विभूषित उस ध्वनि विशेष को राग कहते हैं जो सर्वसाधारण के मन को रंजित करता है।"[7] संगीत में 'राग' का एक विशिष्ट स्थान है। "राग में ही हमारे भारतीय संगीत के जाज्वल्यमान गौरव के उच्चतम शिखर का दर्शन होता है।"[8] राग शब्द 'र०ज' धातु से बना है, जिसका मुख्य अर्थ है रंगना अथवा रंजक संगीत में 'रंजक' उसे कहा जाता है जो सुख अथवा आनन्द देने वाला हो अर्थात् वह स्वर समूह जिसमें रंग देने की शक्ति हो राग कहलाता है। इस प्रक्रिया में मुलत: राग के तीन वर्ग हिन्दोस्तानी संगीत में विद्यमान हैं जिन्हें क्रमश: संधि प्रकाश राग अर्थात् "कोमल 'रे' और कोमल 'ध' वाले राग, दूसरा शुद्व 'ध' वाले राग और तीसरा कोमल 'ग' और नि कोमल वाले रागों के वर्गों में विभाजित किया गया है।"[9] जनचित्त रंजक ध्वनि विशेष राग को प्रतिष्ठित किया गया है। राग शब्द का उदगम 'रज्ज' धातु से है इस धातु से ' ् ' प्रत्यक्ष जोड़ने से 'राग' संज्ञा शब्द निर्मित होता है। जिसका अर्थ है रंग। संगीत में राग हमें अपने रंग में रंग लेता है यही आलौकिक आनन्द की स्थिति है।

हिन्दोस्तानी संगीत के अन्तर्गत रंजकता जो कि राग का मुख्य लक्षण है इन तीनों वर्गों में विद्यमान है। ये तीन वर्ग सम्पूर्ण राग विभाजन का आधार है।

सामान्यत: गज़लों की सांगीतिक बंदिशें हिन्दोस्तानी संगीत के भिन्न-रागों के आधार पर बनती है। लेकिन उनमें सम्बन्धित राग के शास्त्रीय स्वरूप का पालन अधिक नहीं होने पर भी गज़ल की बंदिशें हिन्दोस्तानी संगीत के उपरोक्त तीन वर्गों के अन्तर्गत रहती है एवम् एक वर्ग का दूसरे वर्ग में अतिक्रमण न हो ऐसी गायकों की चेष्टा बनी रहती है। "स्वतन्त्रोत्तर गज़ल गायक गज़ल की सांगीतिक बंदिश बनाते समय रागों की शुद्धता की ओर विशेष ध्यान देते थे।"[10]

इस प्रकार गज़ल गायकी में हिन्दोस्तानी राग पद्धति की मूल अवधारणा का तत्व भी विद्यमान दिखाई देता है।

राग के संदर्भ में ही वादी - संवादी स्वरों को स्पष्ट करना राग के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए अनिवार्य होता है। हिन्दोस्तानी शास्त्रीय संगीत की गायन शैलियों में वादी-संवादी के प्रयोग का तत्त्व महत्त्वपूर्ण स्थान रखना है। इस संदर्भ में गज़ल गायकी में भी राग के वादी-संवादी तत्त्व का अधिकांशतया प्रयोग किया जाता है। इसके अतिरिक्त गज़ल गायकी में किसी राग की प्रस्तुति में विवादी स्वर का प्रयोग भी संगीत शास्त्रों में दिए गए नियमों के आधार पर ही होता है।

ऐसा नहीं है कि किसी एक राग के आधार पर बनायी गई गज़ल की बंदिश में उसकी सांगीतिक प्रस्तुति के समय राग से इतर (वर्जित) स्वर का प्रयोग करके गज़ल गायक-गायिकाएं राग के स्वरूप को नष्ट कर देते हैं। अपितु जहां कहीं राग से इतर स्वर का प्रयोग किया जाता है वह शास्त्रों के नियमानुसार अल्प रूप में ही किया जाता है। इससे राग की रंजकता में वृद्धि तो होती ही है। अत: यह स्वीकार किया जाना चाहिए कि वादी-संवादी और विवादी स्वर-तत्त्वों का सार्थक प्रयोग गज़ल-गायकी में होता है।

---

[7] "स्वर वर्ण विशिष्टे ध्वनिभेदेनन वा जन:,
रज्यते येन कथित: स राग सम्मत सताम।"

[8] भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, लेखिका : स्वतन्त्र शर्मा, पृ. 91

[9] संगीत निबंध, राग-रचना के सिद्धांत और उनकी मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि, लेखक : लक्ष्मीनारायण गर्ग, पृ. 412

[10] हिन्दोस्तानी संगीत में गज़ल गायकी, लेखक : प्रेम भंडारी, पृ. 61

हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत के रचनागत रूप के चार स्वरूप है। जिन्हें 1. स्थाई, 2. अन्तरा, 3. संचारी और 4. आभोग कहा जाता है। किसी भी सांगीतिक प्रस्तुति में ये चार अंग हिन्दोस्तानी शास्त्रीय संगीत में अनिवार्य माने गए हैं किन्तु आधुनिक काल में इन चार अंगों में से अधिकांशतः स्थाई और अन्तरा इन दो अंगों की ही प्रस्तुति होती है।

गज़ल गायकी भी अपने रचनागत स्वरूप में वर्तमान काल में प्रयुक्त होने वाले इन दो अंगों में प्रस्तुत की जाती है। किसी भी गज़ल की सांगीतिक प्रस्तुति तब तक सम्पूर्ण नहीं होती जब तक कि स्थाई और अन्तरा प्रस्तुत नहीं किए जाते अतः ये दो रूप भी गज़ल गायकी में यथावत विद्यमान रहते हैं जिनका प्रयोग हिन्दोस्तानी शास्त्रीय संगीत की अन्य शैलियों एवम् प्रस्तुतियों में होता है।

5.अलंकार

"विशिष्ट वर्ण संदर्भ अलंकार प्रचक्षते।"[11] अर्थात् किसी विशिष्ट वर्ण समुदाय अथवा क्रमानुसार तथा नियमबद्ध स्वर समुदायों को अलंकार कहते हैं। अलंकार एक ऐसा सांगीतिक तत्व है जो साहित्य और संगीत दोनों में ही प्रयुक्त होता है। अलंकार शब्द की परिभाषा इस प्रकार दी गई है, "अलंकारोतीत अलंकार अर्थात् जो तत्व सौन्दर्य वर्द्धन में सहायक होता है।"[12] गज़ल गायकी में हिन्दोस्तानी शास्त्रीय संगीत के सूक्ष्म तत्त्वों के अर्न्तगत अलंकार तत्त्व का भी प्रयोग किया जाता है। यद्यपि ख्याल गायकी की तरह अलंकारिक प्रस्तुतियां तो अनिवार्य रूप से गज़ल गायकी में नहीं दिखाई देती किंतु फिर भी गज़ल गायकी अलंकार तत्त्व से विमुख है ऐसा नहीं कहा जा सकता क्योंकि अधिकांश गज़ल गायक समय-समय पर अपने गायन में अलंकारों को सौन्दर्यवर्द्धन में वृद्धि के लिए प्रस्तुत करते रहते हैं। अतः यह स्वीकारा किया जा सकता है कि हिन्दोस्तानी संगीत का अलंकार तत्त्व भी गज़ल गायकी में विद्यमान है।

हिन्दोस्तानी शास्त्रीय संगीत के उपर्युक्त तत्त्वों में अतिरिक्त अन्य तत्त्व जो सम्पूर्ण सांगीतिक प्रस्तुति के अन्तर्गत आते हैं उनका भी गज़ल गायकी में प्रयोग होता सुना जा सकता है। इन सूक्ष्म तत्त्वों में मुख्यतः मींड, आन्दोलन, गमक, कण स्वर, खटका, मुर्की, अलाप, ताल इत्यादि प्रमुख हैं जिनका प्रयोग शास्त्रीय नियमानुसार ही गज़ल गायकी में होता है। जैसे गज़ल गायकी में मींड का प्रयोग सामान्यतया सभी गज़ल गायक अपनी गायन शैली में करते हैं।

6.आलाप

आलाप गज़ल गायन का आधार स्तम्भ है। इसमें कलाकार एक-एक स्वर को लेकर आगे बढ़ता है ताकि राग के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए गज़ल में निहित भावों को व्यक्त किया जा सके। आलाप गायन को हम गायक का कल्पना संगीत कह सकते हैं जिसमें स्वरों का संवादात्मक स्वरूप तो रहता ही है साथ ही पूर्ण भाव प्रणवता भी रहती है।

भाव प्रदर्शन में गायक या वादक अपने हृदयगत भावों पर आश्रित रहता है अर्थात् कल्पना शक्ति द्वारा भावों को स्वरों और शब्दों के माध्यम से व्यक्त करता है। "आलाप को संगीत के भावपक्ष के साथ जोड़ा जाता है। आलाप को हम गायक की भावुकता का प्रेषक कह सकते हैं।"[13] अगर यह कहा जाए कि गज़ल-गायकी में सांगीतिक आकर्षण का मूल आधार आलाप ही है तो कोई अतिश्याक्ति नहीं होगी। आलाप में कलाकार पर कोई बंधन नहीं होता, न कोई सीमा होती है। प्रत्येक कलाकार की अपनी कल्पना या योग्यता है कि वह अपने अनुभव को इस प्रकार व्यक्त करे कि रसिकों को रस तथा आनन्द की प्राप्ति हो। सांगीतिक रचना प्रारम्भ करने से पूर्व आलाप द्वारा रचना का वातावरण बना दिया जाता है। "एक गायक की कलात्मक प्रतिभा एवं मौलिक सूझ-बूझ हमें उसके आलाप में ही अधिक दृष्टिगत होती है।"[14]

गज़ल गायकी में आलाप का प्रयोग भी बहुतायत से होता है। अगर यह कहा जाए कि गज़ल गायकी में सांगीतिक आकर्षण का मूल आधार आलाप ही है तो कोई अतिश्योकित नहीं होगी। वर्तमान समय में करीब-करीब सभी गज़ल गायक शास्त्रीय संगीत के इस तत्त्व का प्रयोग कर रहे हैं तथा आलाप को द्रुत, विलम्बित स्वरूपों में प्रदर्शित करते हैं।

आलाप का अधिकांशतः प्रयोग गज़ल गायकी के अन्तरे में पहले मिसरे के साथ किया जाता है। स्थाई अधिकांशतः आलाप रहित होती है। आलाप के ऐसे प्रयोग में गज़ल शब्दों में निहित भावों को स्पष्ट करने की कोशिश करते हैं। गज़ल गायक आलापों का प्रदर्शन शब्दों का आधार लेकर करते हैं और आलापों का अंत छोटी - छोटी तानों

---

[11] पं. शारंग देव कृत संगीत रत्नाकर, स्वरगाताध्याय वर्णालंकार, लेखिका : सुभद्रा चौधरी, पृ. 150

[12] भारतीय संगीत वैज्ञानिक विश्लेषण, लेखिका : स्वतन्त्र शर्मा, पृ. 255

[13] लक्ष्मी नारायण गर्ग, निबंध संगीत, रस सृष्टि में आलाप और तान की भूमिका, पृ. 272

[14] भारतीय संगीत में आलाप 'शर्मा महारानी' संगीत; जनवरी-फरवरी 1977, पृ. 21

से करते हुए अन्तरे के पहले मिसरे को फिर से मूल स्वर संयोजक के साथ प्रस्तुत करते हुए दूसरे मिसरे को गाते हैं। इस प्रकार की आलाप युक्त अन्तरों की प्रस्तुति ग़ज़ल गायकी की अपनी विशेषता है।

7.तान

गायन वादन में विचित्रता एवम् चमत्कार उत्पन्न करने के लिए एवम् स्वरों के नए-नए संयोगों द्वारा "गायन-वादन की सजावट के लिए हम जिन स्वरावलियों का प्रयोग करते हैं उन्हें तान कहते हैं।"[15] संगीत के हृदय पक्ष को आलाप व्यक्त करता है तो तानों में बुद्धि का चमत्कार प्रदर्शित होता है। तानों का स्वतन्त्र प्रयोग अधिकांशतः ग़ज़ल गायक ग़ज़लों की सांगीतिक प्रस्तुति में करते हैं। तानों का प्रयोग उचित मात्रा में ही होना चाहिए जिससे केवल कलाकारिता ही नहीं, सौंदर्य बोध में भी वह सहायक सिद्ध हो सके। तानों का अत्याधिक प्रयोग होने पर रसात्मकता में बाधा आने लगती है। तान का विवरण देते हुए पं. भातखंडे ने कहा है "तानों का मुख्य प्रयोजन गायन का वैचि॥य अधिकाधिक बढ़ाना ही है। तानें यदि योग्य रीति से व योग्य प्रमाण से ली जाएं, तो सुनने वालों को सचमुच बड़ा आनन्द आता है।"[16]

कोई-कोई ग़ज़ल गायक अपनी ग़ज़ल की सांगीतिक प्रस्तुति को चमत्कृत करने के लिए स्वतन्त्र तानों का प्रयोग भी करते हैं। ग़ज़ल जिस राग में बंधी होती है उसी राग में आरोही, अवरोही और संचारी वर्ण युक्त स्वर तानों तथा अलंकारों को प्रस्तुत करते हैं। कभी-कभी मूल राग से हटकर भी ग़ज़ल गायकों द्वारा तानें ली जाती है। "स्वतन्त्रयोत्तर कालीन ग़ज़ल गायकी में तानों का प्रयोग बहुतायता से किया जाता है।"[17] लेकिन ग़ज़ल गायकी में तान का प्रयोग सर्वथा अनिवार्य हो यह आवश्यक भी नहीं है।

उपर्युक्त लिखित सांगीतिक तत्त्वों की संक्षिप्त व्याख्या के पश्चात ग़ज़ल गायकी में विभिन्न कलाकारों द्वारा इनका किस प्रकार से प्रयोग हुआ है। उसका विवरण प्रस्तुत करेंगे इसके अन्तर्गत प्रमुख गायकों की गाई ग़ज़लें उदाहरण स्वरूप ली गई हैं उनमें यह उपरोक्त वर्णित सांगीतिक तत्त्वों का मूल्यांकन यहां प्रस्तुत करने का प्रयास किया जाएगा। जिससे शोधार्थी यह दिगदर्शित करने का प्रयास करेगा कि इन कलाकारों ने किस प्रकार प्रयोग करके किस प्रकार सौंदर्य वृद्धि की है।

[15] पाश्चात्य स्वरलिपि पद्धति एवम् भारतीय संगीत, लेखिका : स्वतन्त्र शर्मा, पृ. 175
[16] लक्ष्मी नारायण गर्ग, निबंध संगीत, रस सृष्टि में आलाप और तान की भूमिका, पृ. 276
[17] "हिन्दोस्तानी संगीत में ग़ज़ल गायकी', लेखिका : प्रेम भंडारी, पृ. 61